लोग परस्पर सहयोग क्यों करते हैं?

पी. बालाराम

'योग्यतम की उत्तरजीविता' मुहावरे का उपयोग प्रायः जैव विकास की आधुनिक विचारधारा के द्योतक के रूप में किया जाता है। यह सही है कि यह मुहावरा संक्षिप्त और सारगर्भित है, किंतु साथ ही भ्रामक भी है। चार्ल्स डार्विन की युगांतरकारी पुस्तक *ऑन दी ओरिजिन ऑफ स्पीशीज़* के ठीक एक दशक पहले ख्यात कवि टेनिसन ने अपनी एक कविता में 'प्रकृति के रक्तरंजित दांतों और पंजों' का ज़िक्र किया था। संभवतया टेनिसन को इस कविता की प्रेरणा उस समय प्रकाशित एक पेम्फलेट *वेस्टिजेस ऑफ नेचुरल हिस्ट्री ऑफ क्रिएशन* से मिली थी। आगे चलकर डार्विनवाद की चर्चा के समय टेनिसन की इस पंक्ति का उपयोग प्रकृति में उत्तरजीविता के काव्यात्मक वर्णन के लिए किया जाने लगा।

'योग्यतम की उत्तरजीविता' मुहावरे में ऐसा अर्थ निहित है कि केवल प्रतियोगिता और संघर्ष जैव विकास के लिए उत्तरदायी हैं। जैव विकास के लिए उत्तरदायी कारकों में वरण और अनुकूलन का महत्व आम तौर पर कम ही आंका जाता है।

जीव शास्त्र और प्रकृति को मानवीय मसलों में लागू करने पर यह मुहावरा (योग्यतम की उत्तरजीविता) एक निर्दयी, प्रतिस्पर्धात्मक संसार का एक ऐसा चित्र उभारता है जिसमें केवल 'योग्यतम' आगे बढ़ पाते हैं और जो कमज़ोर होते हैं वे रास्ते से छिटक जाते हैं। हालांकि प्रकृति में संघर्ष और प्रतियोगिता बहुतायत से पाए जाते हैं, मगर जीव शास्त्र में सहयोग और परोपकार के उदाहरणों की भी कमी नहीं है।

मानव संस्कृतियां सदियों से सहयोग और टकरावों के समाधान के आधार पर पनपी हैं, किंतु यह भी सही है कि ये आधार कई बार कमज़ोर सिद्ध हुए हैं। एक विज्ञान प्रशासक के रूप में मुझे यह देख कर प्रायः आश्चर्य होता है कि वैज्ञानिक समुदाय के सदस्यों में आपसी सहयोग के प्रति कितनी अरुचि होती है और उनमें एक साझा दृष्टि और लक्ष्य विकसित करना कितना मुश्किल होता है। व्यक्तिगत काम और स्वार्थ हमेशा सामूहिकता पर हावी हो जाते हैं।

अतः मेरा ध्यान 'सहयोग की उत्पत्ति' शीर्षक से हाल में प्रकाशित एक निबंध की ओर बरबस आकर्षित हुआ। यह निबंध डार्विन वर्ष के संदर्भ में लिखा गया है। सामाजिक कीटों में मज़दूर कीट पूरे समाज की भलाई के लिए काफी अनुशासन से काम करते हैं। इनकी ओर डार्विन का ध्यान आकर्षित हुआ था और उनके अपने शब्दों में यह 'उनके सिद्धांत के लिए न केवल कठिन, बल्कि घातक कठिनाई थी।'

इसके बाद के डेढ़ सौ सालों में यह अनुभव किया गया है कि डार्विन के सिद्धांत और सहयोग और परोपकार में कोई विरोधाभास नहीं है। बहुकोशिकीय जंतुओं की शरीर रचना में कई कोशिकाओं के बीच तालमेल और सहयोग की आवश्यकता होती है। पक्षियों, मधुमक्खियों, हाथियों, बंदरों और मछलियों के समूह

प्रकृति में सहयोग के उदाहरण हैं। असमान जीवधारियों के बीच सहयोग से कई बार अनोखे पारिस्थितिकी तंत्र बन जाते हैं। बैक्टीरिया और पौधों के बीच सहयोग से नाइट्रोजन का स्थिरीकरण होता है। दीमकों द्वारा बनाए गए मिट्टी के विशाल टीले, दीमकों और मिट्टी में पाए जाने वाले विशिष्ट सूक्ष्म जीवों के बीच सहयोग से बनते हैं। कवकों की खेती करने वाली दीमकों के बारे में ई.ओ. विल्सन ने लिखा है, "यह जैव विकास की ऐसी अनोखी घड़ी है जो बिना थके, सटीकता से एक ही क्रिया को दोहराती जाती है। यह बहुत पुरातन है किंतु मानव के किसी भी आविष्कार से अधिक जटिल है।"

पेनिसी अपने एक निबंध में लिखती हैं कि जैविक संसार में सहयोग इतना अधिक व्याप्त है कि उसे उत्परिवर्तन और प्राकृतिक वरण के समकक्ष जैव विकास का तीसरा स्तंभ माना जाना चाहिए। डार्विन के समय से ही रिश्तेदारी को सहयोग के लिए एक महत्वपूर्ण कारक माना जाता रहा है। पेनिसी ने एक महत्वपूर्ण मुद्दा उठाया है जो अधिकांश पाठकों के लिए भी एक पहेली होगा - किसी एक जंतु को पूरे समूह के साथ सहयोग करने से क्या लाभ होता है? जो धोखेबाज़ बिना दूसरों की मदद किए लाभ उठाते हैं उन्हें विकास का अधिक अच्छा अवसर मिलता है क्योंकि वे दूसरों की मदद करने वालों की तुलना में अधिक लाभप्रद स्थिति में होते हैं। इससे तो सहयोग का आधार ही खत्म हो जाएगा। लेख में पेनिसी सहयोगात्मक व्यवहार के लिए अनुवांशिक सम्बंध के महत्व को रेखांकित करती हैं। वे हाल्डेन का उद्धरण देती हैं, जिन्होंने कहा था, "क्या मैं अपने भाई को बचाने के लिए जान की बाज़ी लगा दूंगा? नहीं, किंतु मैं दो भाइयों या आठ चचेरे भाइयों को बचाने के लिए ऐसा ज़रूर करूंगा।"

मानव समाजों में सहयोग की भावना अनुवांशिकी से अधिक बलवान होती है। इंसानों में बड़े पैमाने पर पाई जाने वाली सहयोग की भावना के प्रति समाज शास्त्रियों और खेल सिद्धांत के प्रवर्तकों दोनों में कौतूहल रहा है। इस मामले में मानव समाज अन्य जंतुओं से अलग होते हैं और इस बात के प्रमाण मिलते जा रहे हैं कि गुणसूत्रों और रिश्तेदारियों पर अन्य कारक हावी हो जाते हैं। इस तथ्य ने विविध विषयों के शोधकर्ताओं को आकर्षित किया है। मानवीय व्यवहार की व्याख्या के रूप में अक्सर 'संस्कृति' को पेश किया जाता है, हालांकि संस्कृति को परिभाषित करना गुणसूत्र को परिभाषित करने की तुलना में अधिक कठिन है। विज्ञान और वाणिज्य जैसे विविध क्षेत्रों में सहयोग एक महत्वपूर्ण कारक होता है। मानवीय परोपकार का कई अध्ययनों में विश्लेषण किया गया है। फेहर और फिशबाकर के अनुसार परोपकार के मामले में काफी व्यक्तिगत अंतर पाए जाते हैं और परोपकारियों और स्वार्थियों में होने वाली परस्पर क्रिया मानवीय सहयोग के लिए महत्वपूर्ण होती है। कम संख्या में परोपकारी स्वार्थियों की बड़ी संख्या को सहयोग करने को मजबूर कर सकते हैं। इसके विपरीत, कुछ स्वार्थी, अधिक संख्या वाले परोपकारियों को अपने रंग में रंग सकते हैं। यह माहौल पर निर्भर करता है।

सामाजिक जीव विज्ञान और मानव व्यवहार सम्बंधी साहित्य में ऐसे शब्दों की बहुतायत है जिनका दैनिक जीवन में उपयोग किया जाता हैः सहयोग, दण्ड, प्रतिष्ठा और पारितोषिक। खेल सिद्धांतकार, व्यक्तियों के लिए तीन शब्दों का उपयोग करते हैंः दलबदलू, सहयोगी और दूर रहने वाले। हाल ही में जैव विकास में रुचि रखने वाले कुछ समूहों ने एक अध्ययन किया है जिसका शीर्षक हैः 'सकारात्मक परस्पर क्रियाओं से सार्वजनिक सहयोग को बढ़ावा मिलता है'। इन अध्ययनकर्ताओं ने 'सार्वजनिक हित के खेल' का उपयोग किया है जिसे हम सब अपने दैनिक जीवन में खेलते हैं। अध्ययनकर्ताओं के अनुसार कम ईंधन की खपत वाली कारों का उपयोग करके कार्बन डाईऑक्साइड की मात्रा कम करना और अपशिष्ट पदार्थों मे कमी करना वैश्विक सार्वजनिक हित का खेल है। इसी प्रकार, घर में भोजन के बर्तन स्वयं साफ करना या अपने कार्यालय का काम ईमानदारी से करना भी सार्वजनिक हित के खेल हैं। पहले किए गए कई अध्ययनों के विपरीत इन अध्ययनकर्ताओं का मानना

है कि सार्वजनिक सहयोग बनाए रखने के लिए पारितोषिक उतना ही प्रभावी है जितना कि दण्ड। और पारितोषिक से कुल आय में इज़ाफा भी होता है। इनका निष्कर्ष है कि सार्वजनिक हित के खेल में दण्ड की तुलना में पारितोषिक अधिक प्रभावी होता है और मानवीय सहयोग के लिए दूसरों के साथ सकारात्मक परस्पर क्रिया महत्वपूर्ण है।

खेल सिद्धांत के साहित्य में रोज़मर्रा की शब्दावली और पहेलियों की बहुतायत होती है, किंतु गणितीय मॉडलों और अनुकृतियों पर आधारित इनके विश्लेषण और निष्कर्ष प्रायः अस्पष्ट होते हैं। इस सबके बावजूद, सामूहिक व्यवहार के लिए उत्तरदायी कारक अब धीरे-धीरे समझ में आने लगे हैं। प्रकाशित शोधपत्रों के शीर्षक भी रोचक होते हैं। मुझे शीर्षक 'जीतने वाले दण्ड नहीं देते' विशेष रूप से पसंद आया। इन अध्ययनकर्ताओं का मत है कि प्रत्यक्ष पारस्परिकता के संदर्भ में विजेता दण्ड का उपयोग नहीं करते क्योंकि यह अधिक खर्चीली होता है, जबकि हारने वाले दण्ड देते हैं और बाहर हो जाते हैं।

जीवशास्त्री और खेल सिद्धांतवादी इस संभावना का अध्ययन कर रहे हैं कि क्या दलबदलुओं और धोखेबाज़ों को सहयोगकर्ताओं से अलग पहचाना जा सकता है। समानता के कारण सहानुभूति उपजती है। जीवशास्त्र की दृष्टि से पहचान के आधार अनुवांशिक और रासायनिक होते हैं। परस्पर क्रिया में शारीरिक समानता भी परस्पर विश्वास पैदा करती है। मानवीय सहयोग के निर्धारक कारकों के क्षेत्र में हुए कई अध्ययनों से पता चलता है कि अध्ययनकर्ता इस क्षेत्र में काफी रुचि ले रहे हैं।

जंतुओं के किसी समूह में आपसी सहयोग और दूसरे समूह से संघर्ष बहुत आम हैं। यही बात मानवीय समाजों में भी पाई जाती है। 'संघर्षः सहयोग की दाई' शीर्षक से एक निबंध में सेमुएल बोल्स यह दलील देते हैं कि मनुष्य के वर्तमान सहयोगी स्वभाव का स्पष्टीकरण हमारे लड़ाकू अतीत में मिलता है। वे तर्क देते हैं कि यह अप्रिय विचार संकीर्ण क्षेत्रीय परोपकार के विकास से उभरता है, किंतु वे यह भी कहते हैं कि - परोपकार और संकीर्णता दोनों उस व्यक्ति/जंतु के स्वास्थ्य और सम्पन्नता पर विपरीत असर डालते हैं, जबकि इन दोनों प्रकार के व्यवहारों से बचने पर उसे अधिक लाभ होता है। समाजों, समुदायों और जातियों के बीच होने वाले संघर्षों की व्याख्या संकीर्ण परोपकार के आधार पर की जा सकती है। किंतु बोल्स मानव के भविष्य के प्रति आशावादी दृष्टिकोण अपनाते हुए यह कहते हैंः 'चाहे संकीर्ण परोपकार हमारी विरासत हो किंतु ज़रूरी नहीं कि वह हमारी नियति भी हो'।

यह स्पष्ट है कि विज्ञान और शैक्षिक संस्थानों में सहयोग से कई लाभ होते हैं। एक से अधिक अनुसंधानकर्ताओं के द्वारा सामूहिक रूप से लिखे गए शोधपत्र के बढ़ते प्रचलन, बहुविषयी अनुसंधान के बढ़ते महत्व और आधुनिकतम अनुसंधान कार्य के लिए गठित कई बड़े दलों के कारण वैज्ञानिक सहयोग में नाटकीय रूप से वृद्धि हुई है। विरोधाभास यह है कि जैसे-जैसे वैश्विक वैज्ञानिक वातावरण में अधिक से अधिक प्रतियोगिता होती जा रही है, इस दबाव का सामना करते हुए आगे बढ़ने के लिए व्यक्तियों, समूहों, संस्थाओं, और देशों में गठजोड़ बनते जा रहे हैं। विज्ञान के क्षेत्र में पारितोषिक प्रणाली ने हमेशा समूहों की तुलना में व्यक्तियों को बढ़ावा दिया है। श्रेय के बंटवारे के प्रति अनिच्छा सहयोग की भावना के लिए घातक रही है। रोचक बात यह है कि उच्च शिक्षा और अनुसंधान के वैश्वीकरण के चलते 'योग्यतम की उत्तरजीविता' का मुहावरा विषयों, विभागों और संस्थानों के लिए प्रचलित हो गया। सहयोग से 'योग्यता' में वृद्धि हो सकती है। भारतीय संस्थानों को भविष्य के बारे में सोचना चाहिए जहां सामूहिक प्रयासों के माध्यम से ऐसा वातावरण बन सकेगा जिसमें सामूहिक (सहयोगात्मक) सफलता और व्यक्तिगत उपलब्धि दोनों को बढ़ावा मिलेगा। अंत में जाकर 'धोखेबाज़ों' के बजाय 'सहयोगियों' को स्थान मिलना ज़रूरी है। ***(स्रोत फीचर्स)***